P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6 * ISSUE-5 * (Part-1) January- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

आर्य समाज का जाति प्रथा पर प्रभाव

किरण रानी
सहायक आचार्य,
शिक्षा स्कूल,
हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय,
महेंद्रगढ़

खेराज
सहायक आचार्य,
भूगोल विभाग,
हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय,
महेंद्रगढ़

सारांश

आर्य समाज उन्नीसवीं सदी के भारत के सबसे महत्वपूर्ण धार्मिक और सामाजिक आंदोलनों में से एक रहा है। स्वामी दयानंद सरस्वती ने 1875 में आर्य समाज की स्थापना की जिसके मुख्य उद्देश्य वैदिकवाद को प्रचलित बुराइयों से मुक्त करके उसके शुद्ध रूप में लाना और वैदिक धर्मशास्त्र को पुनः स्थापित करना था। वेदों के अध्ययन को पुनर्जीवित करने के साथ–साथ स्वामी दयानंद ने तत्कालीन समाज में प्रचलित सामाजिक कुरीतियों का खंडन करके समाज सुधार के कार्य भी किये। इन सभी में जन्म पर आधारित जाति व्यवस्था और इससे सम्बंधित अंधविश्वासों व कठोर नियमों की आलोचना प्रमुख रूप से वर्णनीय है। प्रस्तुत शोध पत्र में आर्य समाज के सिद्धांतों के संक्षिप्त विवरण, जाति व वर्ण व्यवस्था पर स्वामी दयानंद के विचारों तथा तत्कालीन समाज में प्रचलित जाति सम्बन्धी प्रथाओं पर आर्य समाज के प्रभाव पर भी जनगणना संबधी दस्तावेजों के हवाले से प्रकाश डाला गया है।

मुख्य शब्द : आर्य समाज, स्वामी दयानंद सरस्वती, जाति व वर्ण व्यवस्था, आर्य समाज का जाति प्रथा पर प्रभाव ।

प्रस्तावना

आर्य समाज उन्नीसवीं सदी के भारत के सबसे महत्वपूर्ण धार्मिक और सामाजिक आंदोलनों में से एक रहा है। दयानंद सरस्वती ने 1875 में आर्य समाज की स्थापना की जिसके मुख्य उद्देश्य वैदिकवाद को प्रचलित बुराइयों से मुक्त करके उसके शुद्ध रूप में लाना और वैदिक धर्मशास्त्र को पुनः स्थापित करना था। वेदों के अध्ययन को पुनर्जीवित करने के साथ–साथ स्वामी दयानंद ने तत्कालीन समाज में प्रचलित सामाजिक कुरीतियों का खंडन करके समाज सुधार के कार्य भी किये। इन सभी में जन्म पर आधारित जाति व्यवस्था और इससे सम्बंधित अंधविश्वासों व कठोर नियमों की आलोचना प्रमुख रूप से वर्णनीय है। स्वामी जी ने वेदों की पुनर्व्याख्या के माध्यम से जाति व्यवस्था की कड़ी आलोचना करके समाज को इन बाधाओं से मुक्त करके एकजुट करने की कोशिश की। उनका दर्शन इस धारणा पर आधारित है कि परमात्मा सभी का सृजनकर्ता है। इस आधार पर उन्होंने सार्वभौमिक भाईचारे के सिद्धांत के प्रचार के द्वारा जाति व्यवस्था को खारिज कर दिया। उन्होंने इस विचार का प्रतिपादन किया कि यदि ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य परिवार में पैदा हुए एक व्यक्ति के कार्य और स्वभाव उच्च नहीं हैं, तो उसको शूद्र बन जाना चाहिए। परन्तु स्वामी दयानंद ने समाज के चार वर्णों, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र में विभाजन को स्वीकार कर लिया, जिसमें विचारकों, संतों और शिक्षकों को सर्वोच्च स्थान पर अर्थात ब्राह्मण वर्ण में रखाय लेकिन उन्होंने जाति प्रणाली की कठोरता का और विशेषकर अस्पृश्यता का कड़ा विरोध किया। इसी के तहत उन्होंने जाति सम्बन्धी, खान–पान सम्बन्धी, विवाह दृसम्बन्धी व अन्य प्रचलित परम्पराओं में बदलाव लेन की कोशिश की।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोध पत्र में उनके व उनके अनुयायिओं द्वारा किया गए इन प्रयत्नों. के फलस्वरूप सामाजिक नियमो व आचार–व्यव्हार में आये बदलाव को विभिन्न दस्तावेजों के माध्यम से अंकित करने की कोशिश की गयी है ।

आर्य समाज के सिद्धांत का संक्षिप्त विवरण

आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानंद सरस्वती ने एक नए सिद्धांत का प्रचार करने की शुरुआत की, उन्होंने स्वीकार किया कि वे एक नए धर्म की स्थापना नहीं कर रहे थे। उनका एकमात्र उद्देश्य वैदिकवाद को शुद्ध रूप में स्थापित करके प्रचलित हिंदू धर्म को शुद्ध करना और वैदिक धर्मशास्त्र का पुनर्वास करना था । उन्होंने कहा कि वेदों की सही व्याख्याओं का अनुसरण करने और गौतम, कपिल, व्यास हरीश चंद्र और कृष्ण द्वारा व्यक्त किए गए दर्शन

का पालन करना आर्यों (स्वामी दयानंद द्वारा सामान्य रूप से हिन्दू समुदाय को दिया गया नाम) का परम कर्तव्य है। उनके लिए सच्चे धर्म ''वेद'' थे, और उनका मानना था कि वेद चार ऋषियों, अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरह के माध्यम से परमात्मा द्वारा किया गया रहस्योद्घाटन हैं। आर्य उन सभी चीजों को अस्वीकार करते हैं जो वेदों के अनुरूप नहीं हैं। 1875 में मुंबई में आर्य समाज की स्थापना करते हुए, स्वामी दयानंद ने निम्नलिखित दस सिद्धांतों को परिभाषित किया। आर्य समाज के सभी सदस्यों को इन सिद्धांतों का अनुपालन करने और उन पर कार्य करने पर बल दिया। ये सिद्धांत निम्नलिखित हैं:

1. "सभी शक्ति और ज्ञान का प्रारंभिक कारण ईश्वर है।
2. ईश्वर ही सर्व सत्य है, सर्व व्याप्त है, पवित्र है, सर्वज्ञ है, सर्वशक्तिमान है और सृष्टि का कारण है। केवल उसी की पूजा होनी चाहिए।
3. वेद ही सच्चे ज्ञान ग्रंथ हैं।
4. सत्य को ग्रहण करने और असत्य को त्यागने के लिए सदा तत्पर रहना चाहिए।
5. उचित–अनुचित के विचार के बाद ही कार्य करना चाहिए।
6. मनुष्य मात्र को शारीरिक, सामाजिक और आत्मिक उन्नति के लिए कार्य करना चाहिए।
7. प्रत्येक के प्रति न्याय, प्रेम और उसकी योग्यता के अनुसार व्यवहार करना चाहिए।
8. ज्ञान की ज्योति फैलाकर अंधकार को दूर करना चाहिए।
9. केवल अपनी उन्नति से संतुष्ट न होकर दूसरों की उन्नति के लिए भी यत्न करना चाहिए।
10. समाज के कल्याण और समाज की उन्नति के लिए अपने मत तथा व्यक्तिगत बातों को त्याग देना चाहिए।" (भारत डिस्कवरी, आर्य समाज, पृष्ठ 2)

जाति व वर्ण व्यवस्था पर स्वामी दयानंद के विचार

दयानंद ने जन्म के आधार पर वर्ण या जाति तय करने की व्यवस्था को खारिज किया। इस कार्य के लिए उन्होंने वेदों की पुनर्व्याख्या को माध्यम बनाया। उन्होंने यजुर्वेद से एक मंत्र का हवाला देते हुए वर्ण और जाति सम्बंधित अन्धविश्वास पर आधारित प्रचलित लोकमतों की कड़े शब्दों में आलोचना की। वेद मन्त्र, उसकी प्रचलित व्याख्या व स्वामी जी द्वारा की गयी पुनर्व्याख्या निम्नानुसार है:

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः ।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्या शूद्रो अजायत ।।

यह यजुर्वेद के ३१वें अध्याय का ११वां मन्त्र है। इसका पंडितों द्वारा प्रदत्त प्रचलित अर्थ है कि ब्राह्मण ईश्वर के मुख से, क्षत्रिय भुजा से, वैश्य ऊरू से और शूद्र पगों से उत्पन्न हुआ है। इसलिये जिस प्रकार मुख भुजा नहीं हो सकते और भुजा मुख नही बन सकती, इसी प्रकार ब्राह्मण क्षत्रियादि नही बन सकते और न ही क्षत्रियादि ब्राह्मण हो सकते हैं।

लेकिन स्वामी जी ने इस व्याख्या नकारा और एक नई व्याक्य प्रदान करते हुए कहा कि जो मुखादि अंग वाला हो वह पुरुष है अर्थात् व्यापक नहीं है। और जो व्यापक नहीं वह सर्वशक्तिमान् जगत् का स्रष्टा, प्रलयकर्त्ता जीवों के पुण्य पापों की व्यवस्था करने वाला, सर्वज्ञ, अजन्मा, मृत्युरहित आदि विशेषणवाला नहीं हो सकता। इसलिये इस का यह अर्थ है कि जो पूर्ण व्यापक परमात्मा की सृष्टि में उत्तम हो, सभी अंगों में उत्तम अंग मुख के सदृश हो, वह ब्राह्मण है। 'बाहुर्वै बलं बाहुर्वै वीर्यम्', अर्थात बल और वीरता का नाम बाहु है। इस प्रकार बल और वीरता जिस में अधिक हो वह क्षत्रिय है। इस प्रकार जो सब पदार्थों और सब देशों में ऊरू के बल से आवे और जावे वह वैश्य है। जो (पद्भ्याम्) पग के अर्थात् नीचे के अंग के सदृश मूर्खत्वादि गुणवाला हो वह शूद्र है। (चतुर्थ समुल्लास, सत्यार्थ प्रकाश)

इसी प्रकार स्वामी जी ने सभी वर्णों में निहित गुण, कर्म व स्वभाव का भी वर्णन किया। विद्या और धर्म के प्रचार का अधिकार ब्राह्मण को देना उचित माना क्योंकि वे पूर्ण विद्यावान् और धार्मिक होने से उस काम को यथायोग्य कर सकते हैं। क्षत्रियों को राज्य के अधिकार देने से कभी राज्य की हानि या विघ्न नहीं होता। पशुपालनादि का अधिकार वैश्यों को ही होना योग्य माना है क्योंकि वे इस काम को अच्छे प्रकार कर सकते हैं। शूद्र को सेवा का अधिकार इसलिये माना है कि वह विद्या–रहित मूर्ख होने से विज्ञान सम्बन्धी काम कुछ भी नहीं कर सकता किन्तु शरीर के काम सब कर सकता है। इस प्रकार वर्णों को अपने–अपने अधिकार में प्रवृत्त करना राजा आदि सभ्य जनों का काम है।

स्वामी दयानंद का मानना है कि एक निम्न वर्ग का व्यक्ति अपने गुण, कर्म और स्वभाव के द्वारा एक उच्च वर्ग के स्तर तक पहुंच सकता है और उसे उसी के अनुरूप स्थान दिया जाना चाहिए। जो निम्न वर्ण वाला व्यक्ति उच्च वर्ण के गुण, कर्म, स्वभाव वाला हो, तो उस को उत्तम वर्ण में और जो उत्तम वर्णस्थ होके नीच काम करे तो उसको निम्न वर्ण में गिनना चाहिये।

शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चौति शूद्रताम्।
क्षत्रियाज्जातमेवन्तु विद्याद्वैश्यात्तथैव च।। मनु०।।

जो शूद्रकुल में उत्पन्न होके ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के समान गुण, कर्म, स्वभाव वाला हो तो वह शूद्र ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य हो जाय, वैसे ही जो व्यक्ति ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यकुल में उत्पन्न हुआ हो परन्तु उस के गुण, कर्म, स्वभाव शूद्र के सदृश हों तो वह शूद्र हो जाय। वैसे क्षत्रिय, वैश्य के कुल में उत्पन्न होके ब्राह्मण व शूद्र के समान होने से ब्राह्मण और शूद्र भी हो जाता है। अर्थात् चारों वर्णों में जिस–जिस वर्ण के सदृश जो–जो पुरुष व स्त्री हो वह उसी वर्ण में गिने जाने चाहिए। (चतुर्थ समुल्लास, सत्यार्थ प्रकाश)

आर्य समाज का जाति प्रथा पर प्रभाव

स्वामी दयानंद सरस्वती ने जाति व्यवस्था की कठोरता को कम करके, समाज को उदार बनाने के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाये थे। स्वामी जी ने आर्य समाज के साथ, निचले वर्गों के सामाजिक उत्थान में काफी रुचि ली और उनको अन्य धर्मों में परिवर्तित होने से बचाने के लिए

अनेक प्रयास किये। इसके लिए उन्होंने दो तरीकों को अपनाया था जो निम्नलिखित हैं

1. जिन निम्न वर्णों को पवित्र धागे यानि जनेऊ का हकदार नहीं माना जाता था, उन वर्णों को जनेऊ पहनने का विशेषाधिकार देकर
2. अस्पर्श्य माने जाने वाले वर्णों को उच्च वर्णों के समान अधिकार देकर।

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए होशियारपुर में दयानन्द दलितोद्धार मंडल का आयोजन किया गया था। आर्य समाज ने निम्न जाति के हिंदुओं को ईसाई धर्म या इस्लाम को गले लगाने से रोकने और हिंदू धर्म के अभिन्न अंग के रूप में उन्हें ऊपर उठाने के लिए शुद्धि आंदोलन शुरू किया। शुद्धि आंदोलन का विचार दयानंद सरस्वती ने स्वयं दिया था जिसके निम्नलिखित उद्देश्य थे

1. (१) विदेशी धर्मों के व्यक्तियों का हिंदू धर्म में रूपांतरण करना,
2. (२) हिन्दू धर्म के जिन व्यक्तियों ने हाल ही में या पुराने किसी समय में कोई विदेशी धर्म अपना लिया था, उनको वापस हिन्दू धर्म में रूपांतरण करना । (मीरा, पृष्ठ 70–71)

इसी दौरान असहयोग आंदोलन को वापस लेने के बाद सांप्रदायिक असहिष्णुता की बढ़ती लहर के चलते, कुछ राष्ट्रवादी नेता जो राष्ट्रीय आंदोलन से वापस आए और उन्होंने अपनी शक्ति, शुद्धि आन्दोलन और हिंदुओं को संगठित करने में डालने का फैसला किया। स्वामी दयानंद के प्रमुख अनुयायियों में से एक स्वामी श्रद्धानन्द (1857–1926) जी थे जो शुद्धि आंदोलन के सबसे शुरुआती नायक रहे। अपने संक्षिप्त कारावास और 'अप्रत्याशित' रिहाई के बाद उन्होंने घोषणा की कि उन्हें अब राजनीति में कोई दिलचस्पी नहीं है। उन्होंने जनवरी, 1923 में कहा कि वह खुद को एक रचनात्मक सामाजिक और धार्मिक कार्यक्रम में समर्पित करेंगे, जिसके लक्ष्यों में अस्पृश्यता को हटाना भी शामिल होगा। ''शुद्धि और संगठन आंदोलनों ने 1920 के दशक में व्यापक पहुंच हासिल की। इसके लिए स्वामी जी ने अपने क्षेत्र में हिंदू संगठन की प्राथमिकताओं को निर्धारित किया, जिसमें उन्होंने चार बिंदुओं पर जोर दिया। सबसे पहले, उन्होंने भारतीय हिंदू शुद्धि सभा को एक जीवित निकाय बनाने और भटके हुए भाई–बंधुओं को वापस संगठित करने के लिए लाखों रुपये और पवित्र भावयुक्त, निस्वार्थ पुरुषों की मांग की। दूसरा, वह 'प्राचीन आश्रम धर्म' को पुनर्जीवित करना चाहते थे, शादी की उम्र बढ़वाना चाहते थे और उच्चतर वर्णों के विधुरों को केवल विधवाओं से विवाह करने की परंपरा स्थापित करना चाहते थे। तीसरा, वह असहवासित बाल विधवाओं को उनकी इच्छा पर पुनर्विवाह करने की अनुमति देना चाहते थे। चौथा, वह जाति व्यवस्था के उन्मूलन और प्राचीन वर्ण–धर्म द्वारा प्रतिस्थापन के प्रस्ताव के रूप में अस्पृश्यता को समाप्त करने और अस्पृश्यता को खत्म करना चाहते थे । स्वामी श्रद्धानन्द की राय में, संगठन अस्पृश्यों के उत्थान से निकटता से जुड़ा हुआ था, जिसे उन्होंने 1923 के बाद 'अपने शेष जीवन का एकमात्र मिशन' बनाया। (स्त्रोत– अध्याय–6, पृष्ठ 270–271 का हिंदी अनुवाद)

इसी समय लाहौर में हिंदू मेहतर और चमार जाति के बीच काफी काम किया गया था। इस संबंध में शुद्धि सभा भारतीय समाज से अस्पृश्यता को हटाने में काफी हद तक महत्वपूर्ण योगदान दे पाई थी। इसके परिणाम स्वरुप सभी जातियों में से व्यक्तियों ने अपनी जाति त्याग कर आर्य समाज को अपना लिया था। सन १९३१ की जनगणना में हिन्दुओं की गिनती 4 शीर्षकों के अंतर्गत की गई थीय हिन्दू ब्राह्मणिक (ब्राह्मणिक हिन्दू धर्म को मानने वाले), हिन्दू आर्य (आर्य समाज को स्वीकार करने वाले), हिन्दू ब्रह्मो (ब्रह्म समाज को स्वीकार करने वाले), अन्य हिन्दू।

यह कहा जा सकता है कि स्वामी दयानद की विचारधारा और प्रयासों से प्रभावित होकर तत्कालीन समाज में काफी संख्या में लोगों ने आर्य समाज को स्वीकार किया और वर्ण या जाति व्यवस्था की कठोरता में कमी आई। जाति और वर्ण में गतिशीलता भोजन और विवाह के अंतरजातीय सम्बन्ध जोड़े बिना पूरी तरह से संभव नहीं है । आर्य समाज में सम्मिलित होने वाले कितने प्रतिशत उच्च जाति या वर्ण के लोगों ने आर्य समाज के प्रभाव से निम्न जाति या वर्ण के लोगों के साथ उनके उच्च गुण, कर्म और स्वभाव को देखते हुए उनके साथ भोजन करना और करवाना स्वीकार किया, या गुण, कर्म और स्वभाव के आधार पर कितने लोग निम्न वर्ण से उच्च वर्ण में या इसके विपरीत उच्च वर्ण से निम्न वर्ण में स्वीकार किये गए, इस विषय में कोई आंकड़े उपलब्ध नहीं हो सके। परन्तु आर्य समाज के लोगों ने अपने वर्ण या जाति को नजरंदाज करके गुण, कर्म और स्वाभाव के आधार पर विवाह सम्बन्ध जोड़े, इस विषय में १९३१ की जनगणना की टिपण्णी में निम्न सूचनाएँ उपलब्ध हैं:

जाति के भीतर विवाह अभी भी लगभग सार्वभौमिक है। आर्य समाज जाति रहित समाज के सिद्धांत का प्रचार करता है, जिसे बाद में कांग्रेस द्वारा भी प्रचारित किया गया। आर्य समाज के भीतर मूल रूप से विभिन्न जातियों के व्यक्तियों के बीच कई विवाह हुए हैं, और आर्य समाज के बाहर भी सामान्य रूप से अंतर्विवाही उप–जातियों में भी आर्य समाजियों ने विवाह किये हैं। इस तरह के विवाहों के बारे में काफी चर्चा होती है लेकिन वे आनुपातिक रूप से नगण्य हैं। कायस्थ, जो की सबसे साक्षर जाति है, एक शिक्षित वधु को काफी महत्व देती है और इसी के परिणामस्वरूप कुछ मामलों में अंतर जाति और अंतर–जाति–विवाह का अनुबंध होता है। रूढ़िवादी हिंदुओं ने भी कभी–कभी ऐसी आर्य लड़कियों से शादी की जो रूपांतरण से पहले ब्राह्मण नहीं थी। सामान्य रूप से अंतर्विवाही उप–जातियों के वैश्यों के बीच विवाह के उदाहरण भी दिखाई पड़ते हैं। विभिन्न आर्य समाज गुरुकुलों के स्नातक, अक्सर अन्य जातियों की लड़कियों से शादी करते हैं। इन गुरुकुलों में से एक के प्रिंसिपल की पुत्री का विवाह किसी अन्य प्रांत के स्नातक से हुआ था जो की जाति से चमार था। लेकिन तथ्य यह है कि

इस तरह की घटनाओं के बारे में इतनी अधिक चर्चा होती है, यह इस बात का संकेत है कि ऐसी घटनाओं की संख्या नगण्य है, और अंतःविवाह की प्राचीन प्रथा (राजपूतों को छोड़कर) में कोई आमूलचूल परिवर्तन नहीं आया है। (जनगणना 1931, पृष्ठ–309)

निष्कर्ष

प्रस्तुत टिपण्णी इस बात का द्योतक है की तत्कालीन रूढ़िवादी समाज की जातीय कट्टरता को कम करने में स्वामी दयानंद सरस्वती ने केन्द्रीय भूमिका निभाई। स्वामी जी द्वारा स्थापित आर्य समाज के अनुयायियों की संख्या को जनगणना में अलग से गिना जाना और जनगणना सम्बंधित दस्तावेजों में आर्य समाज द्वारा जाति सम्बंधित सामाजिक परम्पराओं में लाये जा रहे बदलाव पर विस्तार से चर्चा करना, स्वामी जी के प्रयासों के महत्व का स्पष्ट प्रमाण है। स्वामी जी के प्रयासों का वर्तमान समय में क्या प्रभाव है और आर्य समाज की वर्तमान परम्पराओं में जाति विषय को किस तरह से व्यव्हार में लिया जाता है यह भी एक शोध का विषय है जिस पर विस्तार से अध्ययन की आवश्यकता है। स्वामी दयानन्द की विचारधारा को वर्तमान समय में एक बार फिर प्रचारित करके एक अन्धविश्वासरहित, रूढ़ीमुक्त व जातिमुक्त समाज की संकल्पना की जा सकती है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *भारत डिस्कवरी. आर्य समाज, पृष्ठ 2 http%//bharatdiscovery-org/india/%E0%A4%86%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E0%A4%AF_%E0%A4%B8%E0%A4%AE%E0%A4%BE%E0%A4%9C*
2. *सत्यार्थ प्रकाश. http%//satyarthprakash-in/hindi/chapter&four/*
3. *जनगणना 1931. (GIPE&016889-pdf)] पृष्ठ 309 का हिंदी अनुवाद, file%///C%/Users/Kiran/Downloads/GIPE&016889-pdf*
4. *अध्याय 6- Hindu Communal Mobilisation पृष्ठ 270–271 का हिंदी अनुवाद- http%//shodhganga-inflibnet-ac-in/bitstream/10603/16421/12/12_chapter%206-pdf*
5. *मीरा (२०१४). Arya Samaj and Caste System% A Study of United Provinces. पृष्ठ 70–71 का हिंदी अनुवाद. http%//www-iosrjournals-org/iosr&jhss/papers/Vol19&issue5/Version&1/M019516872-pdf*